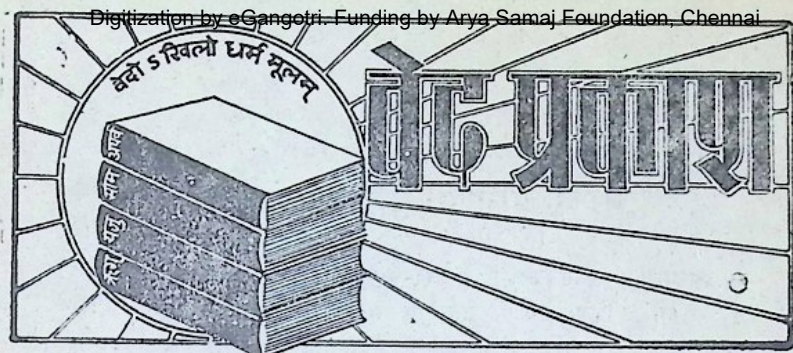




वेद-मन्त्र

सुशंसो बोधि गृणते यविष्ठ्य मधुजिह्व स्वाहुतः ।

प्रस्कण्वस्य प्रतिरन्नाधुर्जीवसे नमस्या दैव्यं जनम् ॥

—ऋग्वेद १।४४।६

१. हे प्रभो ! आप गृणते=स्तुति करनेवाले के लिए सुशंसः=उत्तम शंसन व उपदेश करनेवाले बोधि=जाने जाते हो । उस स्तोता के लिए आप उत्तम ज्ञान देते हैं ।
 २. यविष्ठ्य=गुणों को प्राप्त कराने तथा अवगुणों को दूर करने में सर्वोत्तम प्रभो ! आप अपने स्तोता के लिए मधुजिह्वः=माधुर्यमय जिह्वावाले अर्थात् अत्यन्त मधुर शब्दोंवाले तथा स्वाहुतः=(मु आहुतः) उत्तमोत्तम हव्य पदार्थों को देनेवाले हो । ३. आप प्रस्कण्वस्य=मेधावी पुरुष की आयुः=आयु को प्रतिरन्=बढ़ाते हुए जीवसे=उत्तम जीवन के लिए दैव्यं जनम्=दैव्य लोगों को अर्थात् प्रभुप्रवण पुरुषों को नमस्या=(परिचरणकर्मा नमस्यति) पूजित कराइए । आपकी कृपा से यह अध्यात्मवृत्तिवाले लोगों के सम्पर्क में आए और उनकी सेवा-शुश्रूषा (परिचरण) करता हुआ उनके उपदेशों से जीवन-निर्माण की प्रेरणा लेता हुआ जीवन को उन्नत बनाए । उत्तम जीवन यही है कि मनुष्य (क) प्रभु के उत्तम उपदेशों को सुने, (ख) माधुर्यमयी जिह्वावाला हो, (ग) उत्तम सात्त्विक पदार्थों का ही सेवन करे, (घ) दैव्य लोगों के सम्पर्क में आकर जीवन को उत्तम बनाते हुए दीर्घ जीवनवाला हो ।

भावार्थ—उत्तम जीवन का परिचय प्रस्तुत मन्त्र में 'सुशंसः', 'मधुजिह्वः', 'स्वाहुतः' इन शब्दों में दिया गया है । इस जीवन के निर्माण के लिए यत्नशील होना चाहिए तथा दीर्घजीवन प्राप्त करना चाहिए ।

—पं० हरिशरण के ऋग्वेद-भाष्य से

विशेष वक्तव्य—किन्हीं अपरिहार्य कारणों से हम मई मास का अंक पाठकों को नहीं भेज सके । इसका हमें हार्दिक खेद है । पाठक हमारी विवशता के लिए क्षमा करेंगे ।

—अजय

हमारा आगामी बृहद् विशेषांक

‘वेदप्रकाश’ ने अपने जीवन के आरम्भ-काल में कुछ बृहदाकार (बड़े-बड़े) विशेषांक प्रकाशित किये थे, यथा— दयानन्द ग्रन्थ संग्रह, वाल्मीकि रामायण आदि। लम्बे समय से हम कोई विशाल ग्रन्थ नहीं छाप सके। इस बार सन् १९९३-९४ में हमने श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय लिखित ‘दयानन्द जीवन चरित’ छापने का संकल्प किया है। श्री देवेन्द्रनाथ जी द्वारा लिखित वह अनूठा जीवन-चरित है। उन्होंने १५ वर्ष तक सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करके जहाँ-जहाँ ऋषि गये थे, वहाँ-वहाँ जाकर, जिन-जिन लोगों से ऋषि मिले थे, उन-उनसे मिलकर उनके जीवन की सामग्री एवं घटनाओं का संकलन किया था। इस प्रकार यह प्रामाणिक और खोज-पूर्ण संस्करण है। यह कल्याण (२० × ३०/८) साइज के लगभग ६५० पृष्ठों का ग्रन्थ होगा। कम्प्यूटर से कम्पोज होकर भव्य आकार-प्रकार में छपेगा। सम्पूर्ण कपड़े की जिल्द और उत्तम कागज होगा। इस प्रकार यह एक संग्रहणीय अंक होगा। यह ग्रन्थ इस समय उपलब्ध नहीं है। पुस्तक-रूप में इसका मूल्य होगा २५०.०० रुपये, परन्तु वेदप्रकाश के ग्राहकों को यह ग्रन्थरत्न केवल १५०.०० रुपये में मिलेगा। इसका डाक-व्यय भी हम वहन करेंगे। एक वर्ष तक वेदप्रकाश भी निःशुल्क मिलता रहेगा।

इस बृहद् विशेषांक के अतिरिक्त दो लघु विशेषांक भी होंगे—

१. शास्त्रार्थों के रोचक संस्मरण अंक। शास्त्रार्थों में जो हास्यरसपूर्ण रोचक संवाद, वार्तालाप और प्रश्नोत्तर हुए हैं, उनका समावेश इस अंक में होगा।

२. वेदांक—चुने हुए ७ मन्त्रों की लम्बी व्याख्या।

ये दोनों अंक ३२-३२ पृष्ठों के होंगे। दोनों के लेखक स्वामी जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती होंगे।

बृहद् विशेषांक फरवरी १९९४ में ऋषि के जन्म और बोध अवसर पर प्रकाशित होगा। वेदांक नवंबर ९३ में और शास्त्रार्थों का संस्मरणांक अप्रैल १९९४ में प्रकाशित होगा।

अपना शुल्क १५०.०० शीघ्र भेजकर अपनी प्रति सुरक्षित कर लें। स्वयं ग्राहक बनें, अन्यो को बतायें। विशेषांक सीमित संख्या में ही छपेगा। अपना शुल्क शीघ्र भेजें, बाद में पछताना न पड़े।

—अजय कुमार

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासनन्द

वर्ष ४२, अंक १०] वार्षिक मूल्य : बीस रुपये [मई-जून १९६३

सम्पा० : अजयकुमार आ० सम्पादक : स्वा० जगदीश्वरानन्द सरस्वती

आयुर्वेदीय स्वस्थवृत्त

(दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या एवं सवाचार सहित)

—कृष्णगोपाल गुप्ता

भियगाचार्य, आयुर्वेद-वाचस्पति

सृष्टि के प्रारम्भ से ही मानव सुख की कामना करता आया है; परन्तु सच्चा सुख क्या है, यह वह स्वयं नहीं जानता। शास्त्रकारों ने सुख के दूँदस प्रकार बताए हैं—

१. आरोग्य, २. दीर्घायु, ३. आदयता, ४. काम, ५. भोग, ६. सन्तोष, ७. अस्ति, ८. शुभयोग, ९. निष्क्रमण, १०. अनावाध।

आरोग्य

शरीर की स्वस्थ दशा को आरोग्य कहते हैं। यह वह अवस्था है जिसमें शरीर पर किसी रोग का आक्रमण नहीं हो सकता। यदि आक्रमण हो ही जाए तो उसके प्रतिकार की क्षमता होती है।

दीर्घायु

अर्थात् पूर्ण आयु। मानव की आयु १०० वर्ष मानी गई है। वेदों में लिखा है 'जीवेम शतम्'।

आदयता

धन की प्रचुरता। इस संसार में धन ही भौतिक सुखों का साधन है। धनहीन मनुष्य चिन्ताओं व विपदाओं से घिरा होता है।

जून १९६३

३

काम

काम के दो अर्थ हैं—कामनाओं अर्थात् इच्छाओं की पूर्ति और मैथुन। इच्छाओं की पूर्ति होने पर और मैथुन से जो मानसिक शान्ति और शारीरिक आनन्द प्राप्त होते हैं, उन्हें भी सुख कहा गया है।

भोग

इन्द्रियों के विषयों का सेवन। आँखें सुन्दर रूप देखना चाहती हैं। कान मधुर शब्द सुनना चाहते हैं। नाक सुगन्ध चाहती है। जिह्वा स्वादिष्ट भोजन चाहती है। त्वचा कोमल वस्त्र व शैया चाहती है। इनके मिलने से भी सुख प्राप्त होता है।

सन्तोष

सन्तोष का अर्थ है अल्प इच्छाएँ, अर्थात् जो मिल जाए उसी पर निर्भर रहना और किसी से कोई शिकायत या कामना न करना। कहा भी है 'सन्तोषो सदा सुखी'। मनुस्मृति में लिखा है, 'सन्तोषमूलं हि सुखम्'।

अस्ति

जब किसी पदार्थ की आवश्यकता हो तभी उसकी पूर्ति हो जाना। आवश्यकता पड़ने पर कोई पदार्थ न मिलने पर भी दुःख होता है।

शुभयोग

जन-धन के सब कार्य आसानी से हो जाना। जब कोई काम बिना किसी विघ्न-बाधा के हो जाता है तब उसे शुभयोग कहा जाता है।

निष्क्रमण

प्रव्रज्या अर्थात् संन्यास। गीता में 'काम्य कर्मों' के त्याग को संन्यास कहा है। जब मनुष्य की कोई इच्छा ही नहीं रहती तब उसे अनिर्वचनीय सुख प्राप्त होता है।

अनाबाध

जन्म-मरण की बाधाओं से मुक्ति। इसी को मोक्ष, निर्वाण अथवा कैवल्य कहा जाता है। इसे आत्यन्तिक सुख माना गया है। यही सच्चा सुख और आनन्द है जिसे आत्मा दीर्घकाल तक भोगता है।

उपर्युक्त सभी सुखों में प्रथम सुख आरोग्य बताया गया है। आरोग्य किसका ? उत्तर स्पष्ट है—शरीर का; क्योंकि यम, नियम, आचार-विचार, साधना, श्रम सब

इसी शरीर के द्वारा किये जाते हैं। इसी शरीर से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—इन चार भेदों में विभक्त पुरुषार्थ सम्पन्न होते हैं। आयुर्वेद-शास्त्रों में कहा भी है कि ‘धर्मार्थ-काममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्’ अर्थात् स्वस्थ, आरोग्ययुक्त शरीर से पुरुष धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पदार्थों की प्राप्ति कर सकता है।

आयुर्वेद-शास्त्र के निर्माता प्राचीन ऋषि-मुनियों ने इस तथ्य को अपने गहन चिन्तन, तपस्या एवं निष्ठा के द्वारा हजारों वर्ष पूर्व ही समझ लिया था। न केवल समझ लिया था बल्कि जन-साधारण को समझाने हेतु तत्कालीन प्रचलित देवलपि में लिपिबद्ध भी किया। उन्होंने स्वस्थ मनुष्य की परिभाषा निम्न प्रकार से की है—

“समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥”

अर्थात् जिस व्यक्ति के दोष (वात, पित्त, कफ), अग्नि (पाचकाग्नि, धात्वाग्नि आदि), धातु (रस, रक्तादि) अपनी आवश्यक मात्रा में एवं निश्चित परिमाण में हों (सम हों), मलमूत्रादि क्रियाएँ नियमित हों, आत्मा व मन प्रसन्न हों तथा इन्द्रिय अपने विषय का सुकर्म कर रही हों, वह व्यक्ति स्वस्थ है।

इतने स्वस्थ व्यक्ति की कल्पना आयुर्वेद ही कर सकता है, क्योंकि आयुर्वेद आयु का वेद है। शरीर, इन्द्रिय (कर्मेन्द्रिय व ज्ञानेन्द्रिय), मन और आत्मा के संयोग को आयु कहा है। जो आयु के सम्बन्ध में विचार कर सके, जो आयु के लिए है और जिससे आयु का लाभ है, उसे ही आयुर्वेद कहते हैं। यथा—

“हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।

मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते ॥”

—च० सू० स्था० १।४१

अर्थात् हित आयु, अहित आयु, सुख, दुःख, तथा आयु के लिए जो हितकर (द्रव्य-गुण-कर्म) अथवा अहितकर (अपथ्य) आयु का मान, अवधि और उसके लक्षण जिस शास्त्र में हैं, उसे आयुर्वेद कहा जाता है।

भारतीय वैदिक साहित्य में मानव की आयु १०० वर्ष मानी गई है। इसी को दीर्घायु कहा है। इसकी प्राप्ति के लिए प्रतिदिन ‘आरोग्यं भास्करादिच्छेत्’ के आधार पर भगवान् सूर्य का सेवन किया जाता है और प्रभु से प्रार्थना की जाती है “जीवेन शरदः शतम्”।

इस जगत् में आदिकाल से ही मानव की तीन ऐषणाएँ=इच्छाएँ रही हैं, जिनकी प्राप्ति के लिए मानव क्या-क्या नहीं करता !

आयुर्वेद-शास्त्र के अनुसार भी इस लोक तथा परलोक में अपने हित (भलाई) की इच्छा रखनेवाले मन, बुद्धि, पौरुष (शारीरिक बल), पराक्रम (मानसिक बल) से सम्पन्न पुरुष को तीन इच्छाओं की पूर्ति का प्रयत्न करना चाहिए—

१. प्राणपणा, २. धनपणा, ३. परलोकपणा।

प्राणैषणा—यह ऐषणा (इच्छा) स्वभाव से ही सर्वोपरि होती है, क्योंकि यदि प्राण ही नहीं तो बाकी ऐषणाओं का क्या होगा। प्राणों की रक्षा स्वस्थ पुरुष को स्वास्थ्य-वृत्त के पालन के द्वारा करनी चाहिए।

धनैषणा—प्राणैषणा के बाद दूसरा क्रम धनैषणा का ही आता है, क्योंकि प्राणों के बाद धन-प्राप्ति का प्रयास ही किया जाता है। जीवनोपयोगी साधनों का संकलन करने हेतु धन की आवश्यकता होती है। परिवार का पालन करना, अतिथि-सत्कार करना, दान करना, इन सबमें धन की आवश्यकता होती है, परन्तु यह धन मेहनत तथा ईमानदारी से कमाना चाहिए। ऐसा धन ही सुकर्म-फलदायक होता है।

परलोकैषणा—आयुर्वेदशास्त्र पूर्णतया दार्शनिक शास्त्र से जुड़ा हुआ है, इसलिए शाश्वत है। कुछ लोग यह सन्देह करते हैं कि शरीर छूटने के बाद हम होंगे या नहीं? अथवा कैसे होंगे? यह सन्देह किस कारण से है? महर्षि चरक कहते हैं क्या जो दिखाई दे वही सत्य है? बाकी सब असत्य है? यदि ऐसा ही है तो अपनी आँखों में लगाया गया काजल स्वयं को दिखाई नहीं पड़ता है। समान वस्तु एक-दूसरे में मिलने पर दिखाई नहीं पड़ती है, जैसे गाय का और भैंस का दूध। तो क्या यह सब असत्य है? योगिराज श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मातृतः॥

इस आत्मा को शस्त्र आदि काट नहीं सकते, आग इसे जला नहीं सकती, जल इसे गला नहीं सकता तथा वायु इसे सुखा नहीं सकती। यह अजर है, अमर है। जब तक यह मोक्ष प्राप्त नहीं करती तब तक भोग-योनियों में विचरती रहती है। यही पुनर्जन्म का कारण बनती है।

इन इच्छाओं की प्राप्ति हेतु पहली आवश्यकता स्वस्थ शरीर की है, क्योंकि सभी कार्य स्वस्थ शरीर से ही सम्भव हैं।

स्वस्थ शरीर के लिए यूँ तो आयुर्वेद में बहुत-कुछ लिखा है। आयुर्वेद में स्वस्थ रहने के लिए कुछ नियम बनाए हैं, क्योंकि अनियमित जीवन स्वस्थ नहीं रह सकता। जिस तरह मकान को सुदृढ़ बनाये रखने के लिए खंभों (स्तम्भों) की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार शरीररूपी भवन के लिए भी आयुर्वेद-शास्त्र में आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य ये तीन स्तम्भ बताये हैं। जिस प्रकार खम्भे को उचित प्रकार से न तराशकर, उचित स्थान पर, उचित प्रयोग न करने से मकान गिर जाता है, उसी प्रकार से आहार, निद्रा व ब्रह्मचर्य का सही व सम्यक् प्रयोग न करने से शरीर गिर जाता है तथा व्याधियों से आक्रान्त होकर अन्त में नष्ट हो जाता है। संक्षेप में तीन स्तम्भ निम्न प्रकार से हैं—

आहार—छह प्रकार का होता है। भक्ष्य—खाने योग्य, निगलने योग्य भोज्य जैसे दाल-भात आदि; चर्व्य (चबाने योग्य) जैसे भुने चने आदि; लेह (चाटने योग्य)

जैसे चटनी, शहद आदि; चोष्य (चूसने योग्य) जैसे ईख, आम आदि; एवं पेय (पीने वाले) जैसे दूध, शर्वत आदि। आहार सम्यक् होना चाहिए अर्थात् भोक्ता (भोजन करनेवाले) द्वारा किया गया प्रकृति का उपघात न करके सही समय में पच जाए उतना ही भोजन उसके लिए आहार की मात्रा अथवा प्रमाण है। अधिक भोजन करने से तन्द्रा, आलस्य, अपच आदि रोग होते हैं। वहीं कम मात्रा में भोजन करने से शरीर में कमजोरी आती है, अतः ऋतु अनुसार, बलावल के अनुसार, मानव को पूर्व किये गये भोजन के पच जाने पर पुनः भोजन करना चाहिए।

निद्रा--भोजन की तरह ही स्वस्थ रहने के लिए निद्रा की आवश्यकता है। स्वस्थ पुरुष को कम-से-कम छह घण्टे की प्रगाढ़ निद्रा की आवश्यकता है, क्योंकि दिनभर की थकान के बाद यह आवश्यक है कि शरीर को विश्राम मिले। नींद न आने से आलस्य बना रहता है। मानसिक चिन्ता व हृदय-रोग बढ़ते हैं। प्रकृति ने निद्रा का नियम बनाया है। रात्रि का प्रथम प्रहर बीतते ही सभी चराचर जगत् के प्राणियों को निद्रादेवी अपनी गोद में समा लेती है, जिससे प्राणी के दिनभर कार्य करने के कारण आई थकान दूर होकर प्राणी अगले दिन के कार्य करने हेतु तैयार रहता है।

ब्रह्मचर्य—ब्रह्मचर्य का तात्पर्य मैथुन का सर्वथा परित्याग नहीं है, वीर्य के आवेग का रोकना नहीं है, बल्कि ऋतुकाल के पश्चात् स्वपत्नी से गर्भाधान करना एवं गर्भाधान हेतु ही सम्भोग करना ब्रह्मचर्य है। आज के युग में 'एक नारी सदा ब्रह्मचारी' अर्थात् केवल स्वपत्नी के साथ सम्भोग करनेवाले को भी ब्रह्मचारी ही कहा जाएगा। दूसरी स्त्री को माता या बहन के समान समझनेवाला व्यक्ति भी ब्रह्मचारी ही कहलाता है। अधिक मैथुन करने से वीर्य का क्षय होता है और अनेक रोग पैदा हो जाते हैं।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि स्वस्थ शरीर की उपयोगिता क्या है तथा उसे स्वस्थ किस प्रकार रखा जाए। आयुर्वेद-शास्त्र में शरीर को स्वस्थ रखने हेतु कुछ नियम बताए हैं जिन्हें दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं ऋतुचर्या नाम से जाना जाता है। इसके साथ ही मानसिक स्वास्थ्य के लिए सद्वृत्त (सदाचार) पालन करना बताया है। दिनचर्या से तात्पर्य दिन को किस प्रकार व्यतीत करना है, रात्रि को किस प्रकार व्यतीत करना है तथा किस प्रकार से ऋतुओं का पालन करना है।

आयुर्वेद के मतानुसार दिनचर्या निम्न प्रकार की होनी चाहिए—

दिनचर्या

१ रात्रि के अन्तिम प्रहर में अथवा सूर्योदय से कम-से-कम दो घंटे पूर्व विस्तर का त्याग करें।

२. उठते ही उषःपान अर्थात् ताजा जल का भरपेट सेवन करें। इससे कब्ज

नहीं होती।

३. नेत्रों को शीतल जल के छीटे दे-देकर खूब धोएँ।

४. तत्पश्चात् प्रातःकालीन दैनिक शौचादि से निवृत्त होवें।

५. शौचादि से निवृत्त होकर दन्तधावन करें। दातुन नीम, बबूल, मौलश्री आदि की अच्छी, पतली, नीरोग टहनी की बनावें तथा अच्छी तरह से चवा-चवाकर कुँची बनावें। उस दातुन से दाँत साफ करें व तत्पश्चात् दातुन को बीच में से चीरकर उससे रगड़-रगड़कर जीभ साफ करें, तथा गले में जमे कफ को बाहर निकालें। फिर कम-से-कम दो मील तक प्रातःकालीन भ्रमण करें।

६. तत्पश्चात् सूर्य की किरणों में बैठकर या ऋतु-अनुसार भीतर कमरे में बैठकर हल्का व्यायाम व तेल-मालिश करनी चाहिए। तेल-मालिश करने से श्रम अथवा शक्ति से किये गये कार्य करने पर भी कोई विकृति नहीं आती। रोम-छिद्र खुल जाते हैं। पादतल पर मालिश करने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। मालिश करते समय नाभि में तथा कानों में तेल की दो-दो बूँद डालनी चाहिए इससे पाचन-क्रिया सुधरती है व कर्ण-रोग नहीं होते हैं।

७. मालिश के बाद शरीर पर उबटन लगाना चाहिए। उबटन से शरीर की दुर्गन्ध, भारीपन, तन्द्रा, खुजली, मैल आदि दूर होते हैं। दैनिक कार्यों के प्रति रुचि बढ़ती है तथा पसीने से उत्पन्न विकृति अथवा दुर्गन्ध दूर होती है। उबटन जौ अथवा चने के आटे, तेल, दही अथवा चन्दन आदि को मिलाकर बनाया जा सकता है।

उबटन के पश्चात् ऋतु-अनुसार शीतल अथवा समशीतोष्ण जल से स्नान करना चाहिए। स्नान से शरीर एवं अन्तरात्मा प्रसन्न व पवित्र होती है। यह वीर्य-वर्धक है तथा आयु को बढ़ाता है। स्नान से श्रम, पसीना एवं शारीरिक मैल का नाश होता है।

८. स्नान के पश्चात् मोटे लूयेदार तौलिया से अच्छी तरह रगड़-रगड़कर शरीर का परिमार्जन करना चाहिए, इससे रोम-कूप खुल जाते हैं।

९. तत्पश्चात् ऋतु के अनुसार शीतल अथवा उष्ण वस्त्र धारण करने चाहिए। वस्त्र शरीर की रक्षा करते हैं, शरीर को आतप व शीत से बचाते हैं।

१०. इसके बाद परमपिता परमात्मा की आराधना करनी चाहिए। इससे मन को शान्ति व बल मिलता है। ईश्वर के भय के कारण मानव सत्कर्म में लगा रहता है, ध्यान उसका असत्कर्म की ओर नहीं जाता, जिसके कारण मन पर बोझ नहीं रहता। मन को शान्ति मिलती है, आत्मिक आनन्द प्राप्त होता है।

११. ईश-आराधना के बाद ऋतु के अनुसार हल्का सुपाच्य अल्पाहार करना चाहिए, जिसमें ऋतु-अनुसार फल, मधु व अन्य पदार्थ हों।

१२. इसके बाद अपने दैनिक जीविकोपार्जन हेतु दैनिक कार्य ईश्वर को समक्ष मानकर करने चाहिए। जीविकोपार्जन हेतु जो भी कार्य हों उनमें अपना लाभ

न्याय-संगत होना चाहिए। अपने कर्तव्य के प्रति पूर्ण निष्ठा, आस्था व सामाजिक तथा राजकीय नियमों की पालना करते हुए कार्य करना चाहिए।

१३. दिन के दूसरे प्रहर की समाप्ति पर मध्याह्न में काम के बाद थकान होने पर, भूख लगने पर, देवबलि निकालकर अपने माता-पिता, अतिथि व गुरु तथा भृत्य आदि के भोजन करने के पश्चात् भोजन करना चाहिए। मध्याह्न का भोजन ऋतु के अनुसार करना चाहिए। भोजन करते समय यह साधारणतया अनुमान होना चाहिए कि पेट के चार भाग होने का अनुमान करें जिसमें दो भाग भोजन, एक भाग जल हेतु तथा एक भाग वायु हेतु रिक्त रखें।

१४. भोजन के बाद दाँत साफ करें और स्वच्छ जल से खूब कुल्ला करें।

१५. इसके बाद भोजन को पचने में सहायता करने हेतु तथा मुख की शुद्धि हेतु इलायची, मुलैठी, शीतल मिर्च, साँफ आदि पदार्थों का सेवन करना चाहिए। इन्हें चवा-चवाकर खाना चाहिए जिससे लालास्राव अधिक बने। लालास्राव भोजन को पचाने में सहायक होता है। भोजन शीघ्र पचता है तथा आमाशय में वायु, अम्लपित्त जैसी व्याधियाँ नहीं होतीं।

१६. मध्याह्न के पश्चात् दिन के अन्तिम प्रहर (सूर्यास्त) तक पुनः अपना दैनिक जीविकोपार्जन हेतु कार्य करना चाहिए।

रात्रिचर्या

१. रात्रि के प्रथम प्रहर के प्रारम्भ होने पर (सूर्यास्त होने पर) अपना दैनिक जीविकोपार्जन का कार्य बन्द कर देना चाहिए तथा उष्णोदक से हाथ-पैर अच्छी तरह धोने चाहिए। उष्णोदक से कुछ देर तक पैरों का प्रसेक करने से श्रमजन्य थकान कुछ कम हो जाती है।

२. फिर परिवार के अन्य सदस्यों के साथ बैठकर दिनभर में किये गये कार्यों का सिंहावलोकन करें तथा आनेवाले कल हेतु क्या करना है इसपर विचार करें। परिवार की समस्याओं हेतु मिलकर सबकी राय से सद्बुद्धिपूर्वक सुदृढ़ निश्चय करें। सबकी राय से किया गया निर्णय निश्चय ही सही होता है तथा पारिवारिक मनोमालिन्य को पैदा नहीं होने देता। साथ ही इससे दिनभर की थकान दूर होकर मानसिक शान्ति मिलती है।

३. भोजन के पश्चात् थोड़ी देर टहलना चाहिए। 'भोजनान्ते शतपदं गच्छेत्' के सिद्धान्त के अनुसार थोड़ी देर अवश्य घूमना चाहिए।

४. इसके बाद एकान्त में अपने दिनभर के कार्य का पुनः सिंहावलोकन करें तथा ईश्वर को दिनभर की उपलब्धि के लिए धन्यवाद दें एवं सुखमय जीवन-यापन के लिए वन्दना करें। ईश्वर का स्मरण करें।

५. रात्रि के प्रथम प्रहर की समाप्ति से पूर्व सुकोमल शैया पर शयन करें।

शयन से पूर्व जिन ऋतुओं में स्त्री-प्रसंग का निषेध किया है उन ऋतुओं को छोड़कर, ऋतुकाल होने पर बाजीकारक ओषधियों के सेवन के पश्चात् मधुरभाषिणी, मन को प्रिय लगनेवाली, सुगन्धित द्रव्य लेपन किये हुए, आभूषण आदि से शृंगारित, कामकला को जाननेवाली अपनी स्त्री से रमण कर गर्भाधान कर सकते हैं।

ऋतुचर्या

आयुर्वेद-शास्त्रों में सम्पूर्ण वर्ष को छह ऋतुओं में बाँटा गया है। किस ऋतु में कौन-सा दोष कुपित होता है, कौन-सा रोग हो सकता है, क्या खाना चाहिए, क्या नहीं खाना चाहिए आदि का पूरा विवरण मिलता है। इसे ऋतुचर्या कहा गया है। संक्षेप में ऋतुओं का वर्णन इस प्रकार है—

जैसाकि हम जानते हैं कि सूर्यसहित सभी ग्रहों की स्थिति निरन्तर गतिशील है। ये अपने एक ही चक्र में निश्चित मार्ग पर निश्चित समय में निश्चित दूरी पूरी करते हैं, इसी के आधार पर भारतीय ज्योतिष-शास्त्र का निर्माण हुआ है।

आयुर्वेद के अनुसार सूर्य के उत्तर की ओर जाने के समय—उत्तरायण (आदान-काल) को शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म ऋतु कहा है। इसी प्रकार सूर्य के दक्षिण की ओर जाने को दक्षिणायन (विसर्गकाल), जिसमें वर्षा, शरद् व हेमन्त ऋतु आती हैं, कहा है।

आदानकाल का तात्पर्य है “आददाति क्षपयति पृथिव्याः सोमांशं प्राणिनां च बलमिति आदानम्” अर्थात् सूर्य पृथिवी पर रहनेवाले सौम्य रसों का, प्राणियों के रसों और बलों का आदान करता है, लेता है, अर्थात् आदानकाल में सूर्य उत्तरायण होता है। इसे आग्नेय कहा है। इस काल में सूर्य अपनी तेज किरणों से संसार के जलीय भाग को आचूषित करता है तथा रुक्ष वायु उस जलीय अंश को सुखाता है जो क्रमशः शिशिर, वसन्त व ग्रीष्म ऋतुओं में उत्तरोत्तर अधिकाधिक रुक्षता को उत्पन्न करते हुए रुक्षता-प्रधान तिक्त, कषाय व कटु रसों की वृद्धि करता हुआ प्राणियों के शरीर में दुर्बलता का संचार करता है। शिशिर ऋतु में वनस्पति तथा प्राणियों में अल्प रुक्षता, द्रव्यों में तिक्त रस की उत्पत्ति, अल्प दुर्बलता, वसन्त ऋतु में वनस्पति तथा प्राणियों में मध्यम रुक्षता, द्रव्यों में कषाय रस की उत्पत्ति, मध्यम दुर्बलता एवं ग्रीष्म ऋतु में प्राणियों तथा वनस्पतियों में तीव्र रुक्षता, द्रव्यों में कटु रस की उत्पत्ति एवं तीव्र दुर्बलता होती है।

विसर्गकाल से तात्पर्य “विसृजति क्षपयति आप्यमंशं प्राणिनां च बलमिति विसर्गकालः। विसर्गकाल में सूर्य दक्षिणायन होता है। इस काल में चन्द्रमा पूर्ण बलवान् होता है। वायु अधिक रुक्ष नहीं बहता। चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों से भूमण्डल को आप्यायित करता है। विसर्गकाल में वर्षा, शरद्, हेमन्त इन ऋतुओं में जब सूर्य दक्षिणाभिमुख होता है तब मेघवात और वर्षा के कारण आदानकाल

का प्रभाव घट जाता है तथा जब चन्द्रमा पूर्ण शक्ति-सम्पन्न होता है तब वर्षा के जल द्वारा भूमण्डल-स्थित समस्त प्राणियों का सन्ताप हरता है। तब अरुक्ष, अम्ल, लवण तथा मधुर रसों की द्रव्यों में वृद्धि होकर मनुष्यों में बल की वृद्धि होती है।

आयुर्वेद-शास्त्रों के मतानुसार वर्ष के चारह मासों को निम्न प्रकार से छह ऋतुओं में बाँटा है—

माघ और फाल्गुन	शिशिर ऋतु
चैत्र और वैशाख	वसन्त ऋतु
ज्येष्ठ व आषाढ़	ग्रीष्म ऋतु
श्रावण व भादों	वर्षा ऋतु
क्वार व कार्तिक	शरद् ऋतु
अगहन व पौष	हेमन्त ऋतु

आयुर्वेद में समस्त रोगों का कारण वात, पित्त, कफ—त्रिदोष को माना है। इनके संचय, प्रकोप व प्रशम से रोगों का निदान किया जाता है। वातादि दोषों का संचय, प्रकोप व प्रशम ऋतुओं के अनुसार निम्न प्रकार माना है—

दोष	संचयकाल	प्रकोपकाल	प्रशमकाल
वात	ग्रीष्म	वर्षा	शरद्
पित्त	वर्षा	शरद्	हेमन्त
कफ	हेमन्त	वसन्त	ग्रीष्म

अतएव इन दोषों के संचय, प्रकोप, प्रशमन को देखते हुए मानव को ऋतु के अनुसार दिनचर्या व रात्रिचर्या का नियमित समय निर्धारित करते हुए अपना कार्य करना चाहिए, जिससे मानव सदैव नीरोग रहकर अपने जीवन को सार्थक कर सकता है और अपनी पूर्ण दीर्घायु प्राप्त कर सकता है।

ऋतु-अनुसार दिनचर्या व रात्रिचर्या का वर्णन संक्षेप में निम्न है—

हेमन्त ऋतुचर्या

हेमन्त ऋतु में शीतल वायु के स्वाभाविक स्पर्श होने से बल-सम्पन्न पुरुषों की चिरकालीन रुकी हुई जठराग्नि प्रबल होकर भूख बढ़ाती है। वह जठराग्नि गुरु (भारी) पदार्थों को भी अधिक मात्रा में पचाती है। हेमन्त ऋतु में स्निग्ध, घी, तेल, वसा आदि से युक्त अम्ल, लवण, रसयुक्त भोजन, सेवन करना चाहिए। इस ऋतु में दूध तथा उससे बने पदार्थ, गुड़-तिल आदि से बने पदार्थ, तेल, नये चावलों का भात एवं स्नान आदि में गरम जल का प्रयोग हितकर है, अर्थात् यह कहना उपयुक्त होगा कि हेमन्त ऋतु आनन्द प्राप्त करने का समय है। सभी प्रकार के भोगों की प्राप्ति, उनका उपयोग इस ऋतु में किया जा सकता है। इस ऋतु में तेल मालिश,

स्निग्ध पदार्थों से उबटन, सिर में तेल लगाना, स्वेदन करना, धूप का सेवन, गरम वस्त्रों का धारण करना चाहिए। अगरु का गाढ़ा लेप करना चाहिए। आचार्यों ने हेमन्त ऋतु की चर्या में केवल एक ही श्लोक में बहुत-कुछ कह दिया है यथा — “हसन्ति च हसन्ति च हसन्ति वामलोचनाः। हेमन्ते ये न सेवन्ते ते नूनं देववंचिता” अर्थात् दहकती हुई अँगीठी तथा मन्द-मन्द मुस्कुराती हुई स्त्री, यदि इनका सेवन हेमन्त ऋतु में भी नहीं किया तो देवताओं ने ही उस स्वस्थ पुरुष को भोगों से वंचित कर दिया।

हेमन्त ऋतु में ठण्डे, वात-वर्धक पदार्थ, शीतल पेय, खुली हवा तथा हल्का खाना, लघु पदार्थ आदि का सेवन नहीं करना चाहिए।

शिशिर ऋतुचर्या

हेमन्त एवं शिशिर ऋतु का प्रभाव प्रायः समान रहता है। इसलिए शिशिर ऋतु में हेमन्त ऋतु के समान ही आहार-विहार रखना चाहिए। तथापि इस ऋतु में शीत की अधिक उग्रता रहती है, इसलिए शीतल वायु से बचना चाहिए। गर्म कपड़े अधिक पहनने चाहिए। घरों को गर्म रखना चाहिए। शिशिर ऋतु में कटु, चरपरे, सौंठ, लालमिर्च, तिक्त तथा कपैले, वातकारक ठण्डे सत्तू आदि का प्रयोग न करें। शेष दिनचर्या, रात्रिचर्या, हेमन्त ऋतु की तरह से ही करनी चाहिए।

वसन्त ऋतुचर्या

हेमन्त ऋतु में संचित कफ वसन्त-काल में सूर्य की किरणों से पिघलकर स्रोतों द्वारा शरीर में फैलकर जठराग्नि को मन्द कर देता है। तदनन्तर वह पाचन आदि कार्यों में मन्द होकर विविध प्रकार के रोगों को पैदा कर देता है। इसलिए वसन्त ऋतु में प्रारम्भ में ही वमन आदि पंचकर्मों के द्वारा शरीरस्थ प्रकुपित कफ को निकाल देना चाहिए।

वसन्त ऋतु में व्यायाम करना, उबटन करना, अंजन लगाना, मालिश कर गुनगुने जल में स्नान करना चाहिए। चन्दन-अगरु आदि सुगन्धित द्रव्यों का लेप करना चाहिए। पुराने जी-गेहूँ का सेवन करना चाहिए। कामिनी स्त्री का सेवन भी हितकर है।

वसन्त ऋतु में भारी, गुरु, चिकने पदार्थों का सेवन व दिन में सोना हानिप्रद है। प्रातःकालीन भ्रमण लाभप्रद है तथा कफ को बढ़ानेवाले आहार-विहार का त्याग करना चाहिए।

ग्रीष्म ऋतुचर्या

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य अपनी किरणों से संसार के द्रव्यों तथा प्राणियों के जलीय

सारभाग का अत्यधिक शोषण करता है, अतः इस ऋतु में मधुर रस-प्रधान शीतल द्रव्य तथा स्निग्ध अन्नपानों का सेवन करना चाहिए। शीतलचीनी मिला पानी में घोला हुआ सत्तू, घी, दूध तथा शालिचावलों के भात का सेवन करने से ऋतुजन्य विकारों से बचा जा सकता है। इस ऋतु में लवण, अम्ल व कटुरस-प्रधान द्रव्यों का सेवन तथा अधिक व्यायाम न करें। इस ऋतु में शीतलगृह में दिन में, तथा रात्रि में चन्द्रमा की शीतल किरणों में खुले स्थान पर शीतल द्रव्यों का लेप कर जयन करें। ग्रीष्म ऋतु में मैथुन का पूर्णरूप से त्याग करें।

ग्रीष्म ऋतु पूर्णतया आदानकाल है, अतः गरम, रुक्ष, पित्त-वर्धक पदार्थों का सेवन न करें।

वर्षा ऋतुचर्या

आदानकाल में स्नेह तथा रस के आचूषित हो जाने के कारण शरीर में स्थित जठराग्नि दुर्बल हो जाती है। वर्षा में तपी हुई भूमि पर वर्षा का जल पड़ने से वाष्प निकलती है। उसके कारण लगातार वर्षा होने से, जल के अम्ल विकासशील होने से, और जठराग्नि के मन्द पड़ जाने से वात आदि दोष कुपित हो जाते हैं। वर्षा में वायु कुपित होकर वह अन्य कफ, पित्त आदि दोषों को भी अपने प्रभाव से दूषित कर देता है, अतः यह वायु कफ, पित्त को लेकर जिस अंग में विचरण करता है वहाँ वेदना, दाह, थकावट व कमजोरी को पैदा कर देता है, अतः वर्षा ऋतु में प्राणियों का स्वास्थ्य अन्य ऋतुओं की अपेक्षा अधिक अनियमित हो जाता है। वर्षा में भूमि सर्वत्र जलीय हो जाती है, अतः नंगे पैरों न चलें। जूते आदि पहनकर ही चलें। वर्षा का पानी, कीचड़ आदि लगने से पैरों में अलसक (खारवे) नामक रोग हो जाता है, जिसमें पैरों की अँगुलियों के बीच सड़न पैदा हो जाती है, खुजली हो जाती है तथा खुजलाने पर दाह एवं पीड़ा होती है। वर्षा ऋतु में जल में धोले हुए सत्तू, दिन में सोना, रात्रि में छत पर सोकर ओस का सेवन करना, नदियों का जल, व्यायाम व धूप का सेवन करना, स्त्री-सहवास आदि का त्याग कर देना चाहिए। वर्षा ऋतु में खाने व पीने के सभी पदार्थों के साथ मधु का प्रयोग करना चाहिए। जिस दिन हवा-पानी के कारण अधिक शीत का अनुभव होता है उस दिन शरीरस्थ वायु भी प्रकुपित हो सकता है, अतः प्रकुपित वायु की शान्ति के लिए विशेषतः खट्टे, नमकीन तथा स्निग्ध पदार्थों का सेवन अधिक नहीं करना चाहिए। पुराने जौ-गेहूँ से बने पदार्थों का सेवन हितकारी है।

शरद् ऋतुचर्या

वर्षा ऋतु में संचित पित्त शरद् ऋतु के सूर्य की किरणों की ऊष्मा को पाकर सहसा प्रकुपित हो जाता है, अतः पित्त को शमन करनेवाले अन्नपान, तिक्त द्रव्यों

से सिद्ध धी का पान करें। यदि इनसे भी पित्त का शमन न हो तो पित्त को निकालने के लिए विरेचन का प्रयोग करना चाहिए। इस ऋतु में जठराग्नि अत्यन्त मन्द हो हो जाती है, अतः पहले किये गये भोजन के पच जाने पर व भूख लगने पर ही पुनः भोजन करना चाहिए। शरद् ऋतु में मधुर, लघु, हल्का, शीतल, तिक्तरस-प्रधान, करेला आदि, जौ, गेहूँ का आहार करना चाहिए। शरद् ऋतु में घूप का सेवन, वसा, तेल, ओस, क्षार दही, दिन में सोना व पूर्वी हवा से बचना चाहिए। इस ऋतु में 'हंसोदक' का सेवन करना चाहिए।

हंसोदक बनाने की विधि

दिन में सूर्य की किरणों से तपा हुआ तथा रात्रि में चन्द्रमा की किरणों से शीतल, दिन व रात के समय के परिपाक से निर्दोष जल को हंसोदक कहा जाता है। वर्षा ऋतु में जल अभिनव रहता है और उसमें पार्थित्व, भारीपन आदि आ जाता है, अतः हंसोदक का सेवन पीने व नहाने आदि के कार्य में करना चाहिए।

मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए उपर्युक्त प्रकार से वर्णित दिनचर्या, रात्रिचर्या व ऋतुचर्या का नियम से पालन करना चाहिए। इसके अतिरिक्त धारणीय वेगों का धारण करना चाहिए व अधारणीय वेगों का परित्याग करके सद्वृत्त (सदाचार) करते हुए दीर्घायु प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

वेग

उचित प्रकार से किया गया आहार-विहार, रसादि सप्त धातुओं का पोषण करता है और उनका शेष अथवा सारहीन भाग, मल-मूत्र से बाहर निकलता है। इनकी प्रवृत्ति जब होती है उस समय एक विशेष प्रकार के वेग (दबाव) की अनुभूति होती है। इसी प्रकार के दबाव कई बार मानसिक उद्वेग के कारण होते हैं। इनमें कई वेग ऐसे हैं जिनको रोकने से शरीर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन्हें अधारणीय वेग कहा जाता है। इसके विपरीत कई वेग ऐसे हैं जिन्हें न रोकने से शरीर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन्हें धारणीय वेग की संज्ञा दी गई है। ये निम्न प्रकार से हैं—

अधारणीय वेग

१. मूत्र का वेग—इसे रोकने से मूत्राशय में वेदना, शूल, मूत्रकृच्छ्र, शिरःशूल तथा पथरी जैसे रोग हो जाते हैं।

२. पुरीष का वेग—मल का वेग रोकने से पक्वाशय तथा सिर में शूल, मल का अवरोध, आध्यमान, जंघा-पिंडलियों में ऐंठन, अर्श आदि रोग हो जाते हैं।

३. शुक्र का वेग—रोकने से मूत्रेन्द्रिय व वृषणों में दर्द, सूजन, हृदय में वेदना

तथा मूत्र में विवद्धता हो जाती है।

४. अपानवायु का वेग—रोकने से वात, मल, मूत्र आदि का अपने मार्गों से प्रवृत्त न होना, पेट का फूलना, थकावट का प्रतीत होना व अन्य उदर-रोग हो जाते हैं।

५. वमन का वेग—रोकने से खुजली, शरीर में छोटे-छोटे चकत्तों का पड़ जाना, सूजन, पीलिया तथा ज्वर आदि रोग हो जाते हैं।

६. छोंक का वेग—रोकने से गर्दन का अकड़ जाना (मन्यास्तम्भ), शिरःशूल, अर्दित (मुँह का लकवा), अर्धविभेदक आदि रोग हो जाते हैं।

७. उद्गार (डकार) के वेग को रोकने से—हिचकी, खाँसी, कम्प, हृदय का भारीपन, आदि रोग हो जाते हैं।

८. जम्भा (जंभाई) के वेग को—रोकने से विनाम (एक प्रकार की ऐंठन), आक्षेप, कम्पवात तथा स्पर्श का अनुभव न होना आदि रोग हो सकते हैं।

९. क्षुधा (भूख) के वेग—को रोकने से कृशता, वैवर्ण्य, अंगमर्द, अरुचि व भ्रम आदि रोग हो जाते हैं।

१०. प्यास (पिपासा)—का वेग रोकने से गले व मुख का शोष, बहरापन, थकावट, श्वास एवं मूर्च्छा आदि रोग हो जाते हैं।

११. वाष्प (आँसू) का वेग—रोकने से जुकाम, नेत्र-सम्बन्धी रोग, हृदय-विकार, व अरुचि हो जाती है।

१२. निद्रा का वेग—रोकने से जंभाई, अंगमर्द, तन्द्रा, कफ तथा शिरो-रोग हो जाते हैं।

१३. श्रमज निःश्वास का वेग—रोकने से मूर्च्छा, गुल्म व हृदय रोग हो जाते हैं। इन वेगों को रोकना नहीं चाहिए। इन्हें रोकने (धारण करने) से कई प्रकार की व्याधियाँ हो जाती हैं।

जिस प्रकार अधारणीय वेगों को रोकना नहीं चाहिए, उसी प्रकार धारणीय वेगों (रोकनेवाले वेगों) को धारण करना चाहिए, जिससे मानसिक व. शारीरिक तथा सामाजिक बल मिलता है, ये निम्न हैं—

धारणीय वेग

१. शक्ति से अधिक साहस का प्रदर्शन या कार्य करना।
२. अधिक बोलना व मिथ्या बोलना।
३. अशुभ तथा अभद्र बोलना।
४. अप्रिय भाषण।
५. अशुभ चिन्तन तथा अशुभ कार्य करना।
६. लोभ करना।

७. क्रोध करना ।
८. भय का धारण करना ।
९. शोक का धारण करना ।
१०. पर-स्त्री-गमन करना ।

सद्वृत्त अर्थात् सदाचार

सद्वृत्त अर्थात् सज्जनों का आचरण अथवा शुभ आचरण । शान्ति, शौच, सत्-आचार के योग से उत्पन्न जो धर्म उसके प्रभाव से धर्म, अर्थ, काम (इस त्रिवर्ग) को निरापद करके जो निर्वाह करते हैं उन्हें सज्जन कहते हैं । उनके आचरण का सेवन करता हुआ मानव एक-साथ दो लाभों को प्राप्त करता है—१. आरोग्य लाभ, २. अपनी इन्द्रियों पर विजय । वे सद्वृत्त निम्न प्रकार से हैं—

१. देवता, गाय, ब्राह्मण, गुरु, वृद्ध (ज्ञानवृद्ध/वयोवृद्ध), सिद्ध, तपस्वी और आचार्य, माता, पिता और अग्रज—इनकी सेवा करें, इनकी आज्ञा का पालन करें ।

२. प्रशंसनीय, अनुभूत अथवा जिन्हें धारण करने से विशेष प्रभाव होता है ऐसी ओषधियों को धारण करें ।

३. दोनों समय ईश्वर की आराधना करें ।

४. मलायनों अर्थात् आँख, कान, नाक, मुख, रोमकूप, गुदा तथा मूत्रमार्ग एवं पैरों को सदा स्वच्छ रखें ।

५. प्रत्येक पक्ष में तीन बार केश, श्मश्रु, लोम तथा नखों को कटवाता रहे ।

६. शिर, कान, नाक व पैरों के तलुओं में प्रतिदिन तेल डालें तथा लगाएँ ।

७. दूसरा पहले बोले उसके बाद मैं बोलूंगा—ऐसी इच्छा का त्याग कर स्वयं पहले बोलने का अभ्यास करें ।

८. विपत्ति में पड़े हुए की रक्षा करें ।

९. सभी प्राणियों को बन्धु के समान समझें ।

१०. राग, द्वेष, ईर्ष्या आदि मानसिक विकारों से दूर रहें ।

११. सदा सत्य बोलें ।

१२. पराये धन को लेने की इच्छा न करें ।

१३. परस्त्री को माता और बहन के समान मानें ।

१४. दूसरे के दोषों को न देखें । अपने अवगुणों को सतत ध्यान में रखें तथा उन्हें दूर करने का प्रयास करें ।

१५. दूसरे की गुप्त बातों को सुनने का प्रयास न करें । न ही किसी को अपने गुप्त भेद कहें ।

१६. अधार्मिक, राज्य-द्वेषी, पागल, पतित, छोटे स्वभाववाले व दुष्ट प्रवृत्ति-वाले व्यक्ति के पास न बैठें ।

१७. दावाग्नि से आक्रान्त स्थान के चारों ओर न घूमें।
 १८. बहुत जोर से न हँसें।
 १९. बिना मुँह ढके हुए छींक, खाँसी, जंभाई न लें और हँसी को प्रारम्भ न करें।
 २०. नाक व कान को अँगुली या सींक आदि से न कुरेदें।
 २१. दाँतों को न किटकटायें, परस्पर अस्थि-प्रधान अंगों को न रगड़ें। न भूमि को अँगुली से खोदें और न ही आँख, मुख आदि से अनुचित चेष्टाएँ करें।
 २२. तेज चमकनेवाली ज्योति को न देखें और न ही अनिष्टकारक, अपवित्र तथा अशुभ वस्तुओं को देखें।
 २३. शव को देखकर अपमान, तिरस्कार या घृणा-सूचक हुंकार न करें।
 २४. रात्रि में चैत्य स्थान, चौराहा, उपवन, श्मशान और वधस्थान पर न जाएँ।
 २५. किसी खाली घर में तथा वन में अकेले न जाएँ।
 २६. महान् पुरुषों का विरोध न करें। न ही नीच पुरुष की सेवा करें।
 २७. थकावट दूर करने से पूर्व, बिना मुख धोये एवं नंगे होकर स्नान न करें।
 २८. पूज्य व्यक्तियों तथा मंगलकारी द्रव्यों को दाई ओर करके और अपूज्य तथा अमंगलकारी द्रव्यों को बाई ओर करके कोई यात्रा न करें।
 २९. बिना हाथ धोये, बिना ईश्वर को याद किये, माता-पिता, गुरु, अतिथि तथा परिवार के अन्य आश्रित जनों व नौकरों को भोजन कराये बिना, विश्वस्त व्यक्ति के लाये बिना, अनुचित स्थान में, अशुद्ध वर्तनों में लाया हुआ, असमय में और प्रतिकूल व्यक्ति द्वारा दिये गये भोजन का सेवन न करें।
 ३०. न टेढ़ा होकर छींकें, न भोजन करें, न सोएँ। मल-मूत्र का वेग होने पर आवश्यक कार्य को भी छोड़कर मल-मूत्र का त्याग करें। वायु, अग्नि, जल, चन्द्र, सूर्य, ब्राह्मण व गुरुजनों की ओर न थूकें। जहाँ अनेक लोग रहते हों, अथवा खड़े हों, भोजन के समय जप, होम व अध्ययन तथा मांगलिक कार्यों के बीच थूकना या नाक साफ करना निषिद्ध है।
 ३१. स्त्री का अपमान न करें। न ही उनका अधिक विश्वास करें, न ही उन्हें गोपनीय भेद बताएँ।
 ३२. रजस्वला, रुग्णा, अपवित्र, अरुचिकर, अप्रियरूप, अनिष्ट आचरण से युक्त, कामकला में अकुशल, विपरीत आचरणवाली, मैथुन की इच्छा न रखनेवाली, अपने पुरुष को छोड़कर अन्य पुरुष को चाहनेवाली दूसरे की स्त्री, स्त्री-योनि को छोड़कर अन्य योनि में तथा ग्राम अथवा नगर का महान् वृक्ष, आँगन, चौराहा, बगीचा, श्मशान, वधस्थान, जलाशय, औषधालय, गुरु के घर, देव-मन्दिर में, प्रातः अथवा सन्ध्याकाल में, अतिथि में, अपवित्र स्थिति में, बाजीकरण ओषधि

सेवन के बिना, बिना भोजन किये, मल-मूत्र का वेग होने पर, थकावट होने पर, व्यायाम, उपवास तथा बलगम से पीड़ित होने पर, बिना एकान्त के प्राप्त हुए मैथुन न करें।

३३. सज्जन पुरुषों तथा गुरुजनों की निन्दा न करें और अपवित्र स्थिति में रहकर अभिचार कर्म न करें।

३४. आकाश में बिजलियों के चमकने पर, चारों दिशाओं में आग लगने पर, आस-पास में आग लग जाने पर, भूकम्प होने पर, बड़े-बड़े उत्सव होने पर, उल्का-पात होने पर, सूर्य तथा चन्द्रग्रहण होने पर, अमवास्या के दिन प्रातः-सायं, मन्ध्या के समय, गुरुमुख से उपदेश प्राप्त किये बिना अध्ययन न करें।

३५. बुद्धिमान् पुरुषों की सम्मति से बनाये गये नियमों का त्याग न करें।

३६. शास्त्र एवं लोकमर्यादा के नियमों का पालन करें।

३७. रात्रि में न घूमें तथा अपरिचित स्थान में विहार न करें।

३८. सन्ध्याकाल में भोजन, अध्ययन, स्त्री-सहवास एवं शयन न करें।

३९. बालक, वृद्ध, लोभी, मूर्ख, क्लेशयुक्त जीवनयापन करनेवालों तथा नपुंसकों के साथ मित्रता न करें।

४०. मद्यपान, जूआ खेलने व वेश्यागमन की इच्छा न करें।

४१. किसी का अपमान न करें। अभिमान न करें। स्वाभिमान की रक्षा करें।

४२. कार्यकुशल और उदार बनने का सतत प्रयत्न करें।

४३. वृद्ध, गुरुजन व जनसमूह और राजा, इनके प्रति कोई आक्षेप न करें।

४४. बान्धव, प्रेमीजन, आपत्तिकाल में सहायक तथा गुप्त बातें जाननेवाले व्यक्तियों को अपने सम्पर्क से अलग न करें।

४५. जिस कार्य के लिए जो समय निश्चित है उसका अतिक्रमण न करें। जिसके सम्बन्ध में ठीक जानकारी न हो ऐसे कार्य के प्रति मनोयोग न रखें।

४६. इन्द्रियों के वश में न रहें अपितु इनको अपने वश में रखें। मन को चंचल न होने दें।

४७. कार्य की सफलता में अधिक प्रसन्न, और कार्य की विफलता में अधिक दुःखी न हों।

४८. ब्रह्मचर्य, ज्ञान, मित्रता, दयालुता, हर्ष, उपेक्षा और शान्ति, इनमें तत्पर रहें।

४९. बड़े व विद्वान् व्यक्ति से सम्पर्क बढ़ाने का प्रयास करते रहें।

इस प्रकार उपर्युक्त सद्वृत्त का पालन करनेवाला व्यक्ति सत्पुरुष व आदरणीय होता है तथा जगत् में सुयश प्राप्त करता है।



हमारे प्रकाशन

धर्म अर्थ-काम-मोक्ष-प्रदायिनी

महात्मा आनन्द स्वामी

सरस्वती की

सरल सुबोध आध्यात्मिक

पुस्तकें

आनन्द गायत्री कथा	१२.००
एक ही रास्ता	१२.००
शंकर और दयानन्द	८.००
मानव जीवन-गाथा	१२.००
सत्यनारायण व्रत कथा	५.००
भक्त और भगवान	१२.००
उपनिषदों का सन्देश	१६.००
घोर घने जंगल में	२०.००
मानव और मानवता	३०.००
प्रभु मिलन की राह	२०.००
यह धन किसका है ?	२०.००
बोध-कथाएँ	१६.००
दो रास्ते	१५.००
दुनिया में रहना किस तरह	१५.००
तत्त्वज्ञान	२०.००
प्रभु-दर्शन	१५.००
प्रभु-भक्ति	१०.००
महामन्त्र	१२.००
सुखी गृहस्थ	६.००

अंग्रेजी पुस्तकें

Anand Gayatry

Discourses 30.00

The Only Way

30.00

जीवनी

महात्मा आनन्द स्वामी (उर्दू)

(ले० रणवीर)

१०.००

महात्मा आनन्द स्वामी (हिन्दी)

(ले० सुनील शर्मा)

२५.००

परिव्राजक स्वामी जगदीश्वरानन्द

सरस्वती कृत विद्वत्तापूणं पुस्तकें

महाभारतम् (तीन खण्ड)

६००.००

वाल्मीकि रामायण

१५०.००

षड्दर्शनम्

प्रेस में

चाणक्यनीति दर्पण

प्रेस में

प्रार्थना लोक

२५.००

ब्रह्मचर्य गौरव

८.००

विद्यार्थियों की दिनचर्या

८.००

दिव्य दयानन्द

८.००

कुछ करो कुछ बनो

प्रेस में

आदर्श परिवार

१५.००

वैदिक उदात्त भावनाएँ

१२.००

वेद सौरभ

१२.००

दयानन्द सूक्ति और सुभाषित

२५.००

वैदिक विवाह पद्धति

८.००

ऋग्वेद सूक्तिसुधा

२५.००

यजुर्वेद सूक्ति सुधा

१२.००

अथर्ववेद सूक्ति सुधा

१५.००

सामवेद सूक्ति सुधा

१२.००

ऋग्वेद शतकम्

८.००

यजुर्वेद शतकम्

८.००

सामवेद शतकम्

८.००

अथर्ववेद शतकम्

८.००

भक्ति संगीत शतकम्

६.००

चमत्कारी ओषधियाँ

१२.००

घरेलू ओषधियाँ

१२.००

चतुर्वेद शतकम्

५०.००

महर्षि दयानन्द सरस्वती

पंचमहायज्ञविधि	३.००
व्यवहार भानु	४.००
आर्योद्देश्यरत्नमाला	०.७५
स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश	०.७५

डॉ० रामनाथ वेदालंकार

वैदिक मधुवृष्टि	६०.००
-----------------	-------

आ० प्रियव्रत वेदवाचस्पति

वेदोद्यान के चुने हुए फूल	५०.००
---------------------------	-------

डॉ० भवानीलाल भारतीय

श्यामजी कृष्ण वर्मा	२४.००
आर्यसमाज-विषयक साहित्य	२५.००

क्षितीश वेदालंकार

चयनिका	१२५.००
--------	--------

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

सृष्टिविज्ञान और विकासवाद	४०.००
वेद-मीमांसा	५०.००

स्वामी श्रद्धानन्द

कल्याण मार्ग का पथिक	६०.००
स्वामी श्रद्धानन्द ग्रन्थावली (न्यारह खंड)	६६०.००

प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु सम्पादित

महात्मा हंसराज ग्रन्थावली (४ खंड)	२४०.००
महात्मा हंसराज जीवनी	६०.००

पं० चन्द्रभानु सिद्धान्तभूषण

महाभारत सूक्तिसुधा	४०.००
--------------------	-------

स्वामी वेदानन्द सरस्वती

ऋषि बोध कथा	१०.००
वैदिक धर्म	२५.००

**Swami Satya Prakash
Sarasvati**

Founders of Sciences in
Ancient India
Two Volumes 500.00

Coinage in Ancient India
Two Volumes 600.00

Geometry in Ancient
India 350.00

God and His Divine Love 5.00

The Critical and Cultural
Study of Satapath
Brahman 700.00

Speeches, Writings &
Addresses Vol. I
Vincitveritas 150.00

Speeches, Writings &
Addresses Vol. II
Arya Samaj :
A Renaissance 150.00

Speeches, Writings &
Addresses Vol. III
Dayanand :
A Philosopher 150.00

Speeches, Writings &
Addresses Vol. IV
Three Life Hazards 150.00

सुरेशचन्द्र वेदालंकार

ईश्वर का स्वरूप	१५.००
सहेलियों की वार्ता	२०.००

ओम्प्रकाश त्यागी

वैदिक धर्म का संक्षिप्त परिचय	६.००
-------------------------------	------

प्रो० नित्यानन्द पटेल

पूर्व और पश्चिम	३५.००
संध्या विनय	६.००

पं० नरेन्द्र

हैदराबाद के आर्यों की साधना व संघर्ष	१०.००
---	-------

प्रो० रामविचार एम० ए०

आर्यसमाज का कायाकल्प कैसे हो ४.००

म० नारायण स्वामी

प्राणायाम विधि २.००

कवि कस्तूरचन्द

ओंकार एवं गायत्री शतकम् ३.००

घर का वैद्य

लेखक : सुनील शर्मा

घर का वैद्य प्याज ६.००

" लहसुन ६.००

" गन्ना ६.००

" नीम ६.००

" सिरस ६.००

" तुलसी ६.००

" आंवला ६.००

" नींबू ६.००

" पीपल ६.००

" आक ६.००

" गाजर ६.००

" मूली ६.००

" अदरक ६.००

" हल्दी ६.००

" बरगद ६.००

" दूध-घी ६.००

" दही-मट्ठा ६.००

" हींग ६.००

" नमक ६.००

" बेल ६.००

" शहद ६.००

" फिटकरी ६.००

" साग-भाजी ६.००

" अनाज ६.००

" फल-फूल ६.००

घर का वैद्य ५ जिल्दों में २२५.००

त्रिलोकचन्द विशारद कृत

महर्षि दयानन्द ३.००

स्वामी श्रद्धानन्द ३.००

गुरु विरजानन्द ४.००

धर्मवीर पं० लेखराम ३.००

मुनिवर पं० गुरुदत्त ३.००

स्वामी दर्शनानन्द ३.००

कर्मकांड की पुस्तकें

आर्य सत्संग गुटका ३.००

पंचयज्ञ प्रकाशिका ८.००

वैदिक संध्या ०.७५

संध्या-हवन-दर्पण (उर्दू) ८.००

सत्संग मंजरी ६.००

Vedic Prayer 3.00

आचार्य उदयवीर शास्त्री

आचार्य शंकर का काल १०.००

विद्यामार्तण्ड पं० विश्वनाथ**विद्यालंकार**

संध्या रहस्य २५.००

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत

शतपथ ब्राह्मण (तीन खण्ड) १८००.००

जीवात्मा ७५.००

सन्ध्या क्या क्यों कैसे १०.००

बाल साहित्य

बालशिक्षा (ले० स्वामी दर्शनानन्द) २.५०

वैदिक शिष्टाचार २.५०

प्रशान्त वेदालंकार

धर्म का स्वरूप ५०.००

सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०**चित्र**

नैतिक शिक्षा	प्रथम २.००	स्वामी दयानन्द		
नैतिक शिक्षा	द्वितीय २.००	(कुर्सी) १८" x २२" एक रंग	३.००	
नैतिक शिक्षा	तृतीय २.५०	स्वामी दयानन्द		
नैतिक शिक्षा	चतुर्थ ४.००	(आसन) ,, ,,	३.००	
नैतिक शिक्षा	पंचम ४.५०	स्वामी श्रद्धानन्द ,, ,,	३.००	
नैतिक शिक्षा	षष्ठ ५.५०	गुरु विरजानन्द ,, ,,	३.००	
नैतिक शिक्षा	सप्तम ५.००	पण्डित लेखराम ,, ,,	३.००	
नैतिक शिक्षा	अष्टम ५.००	स्वामी दर्शनानन्द ,, ,,	३.००	
नैतिक शिक्षा	नवम ६.००	पं० गुरुदत्त विद्यार्थी ,, ,,	३.००	
नैतिक शिक्षा	दशम ६.००			

अन्य प्रकाशन**डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार कृत****स्वामी योगेश्वरानन्द कृत**

एकादशोपनिषद्	६५.००	बहिरंग योग	७०.००
उपनिषद् प्रकाश	८५.००	आत्मविज्ञान	८०.००
श्रीमद्भगवद् गीता	८५.००	ब्रह्मविज्ञान	१००.००
संस्कार चन्द्रिका	८५.००	दिव्यज्योति विज्ञान	४०.००
बुढ़ापे से जवानी की ओर	८०.००	प्राण विज्ञान	३०.००
होमियोपैथिक चिकित्सा	१५०.००	दिव्य शब्द ज्ञान	६०.००
होमियोपैथिक चित्रण	१०५.००	निर्गुण ब्रह्म	३०.००
होमियोपैथिक क ख ग		व्याख्यानमाला—५ भाग	१५०.००
होमियोपैथिक के मूल सिद्धान्त	७०.००	हिमालय का योगी—I	४५.००
वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्व	४०.००	हिमालय का योगी—II	७५.००
From old age to youth through Yoga	८०.००	First Step to Higher Yoga	75.00
चतुर्वेद गंगा लहरी	६५.००	Science of Soul	80.00
मेरी नानी की कहानी	३५.००	Science of Divinity	100.00
		Science of Divine Light	45.00
		Science of Vital Force	40.00
		Science of Divine Sound	40.00
		The Essential Colour-	
		lessness of the Absolute	40.00
		Beads of Sermons	30.00
		Himalaya Ka Yogi—I	80.00
		Himalaya Ka Yogi—II	80.00

सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित

ऋग्वेद भाष्य हिन्दी ५ भाग	३४५.००
अथर्ववेद भाष्य हिन्दी २ भाग	२००.००
यजुर्वेद भाष्य हिन्दी १ भाग	६०.००
सामवेद भाष्य हिन्दी १ भाग	७५.००

चमूपति एम० ए०

योगेश्वर कृष्ण	४०.००
विचार वाटिका	४०.००
वैदिक स्वर्ग	३०.००

जयदेव वेदालंकार कृत वेदभाष्य

ऋग्वेद भाषा भाष्य (७ भाग)	३५०.००
अथर्ववेद भाषा भाष्य (४ भाग)	२००.००
यजुर्वेद भाषा भाष्य (२ भाग)	१००.००
सामवेद भाषा भाष्य	५०.००

शिवकुमार शास्त्री

श्रुति सौरभ ६० ००

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी

सुखी जीवन १८.००
 सुखी गृहस्थ १२.५०
 सुखी परिवार १८ ००
 आचार शिक्षा १०.००
 नीति शिक्षा १०.००
 वेदों में नारी १५.००
 सुखी समाज १८.००
 वैदिक मनोविज्ञान १८.००
 यजुर्वेद सुभाषितावली १५.००
 सामवेद सुभाषितावली १५.००
 अथर्ववेद सुभाषितावली २५.००
 ऋग्वेद सुभाषितावली ३०.३०

त्वामी विद्यानन्द सरस्वती

भूमिका भास्कर—I-II ३००,००
 तत्त्वमसि ५०.००
 सत्यार्थ भास्कर I भाग ४००.००
 आयों का आदिदेश ६०.००
 और उनकी सभ्यता

आचार्य अभयदेव

वैदिक विनय १००.००
 ब्राह्मण की गौ ४०.००
 तरंगित हृदय ४०.००
 यज्ञ योग ४०.००

डॉ० विद्यासागर अबरोल

मोक्ष द्वार २५.००

डॉ० ओम्प्रकाश वेदालंकार

प्रभु के द्वार पर २२.५०

ब्रह्ममुनि

साम सुधा २.५०

रमेश मुनि वानप्रस्थ

वैदिक यज्ञानुष्ठान विधि ८०.००

पं० भगवद्दत्त

सविता देवता ३५.००
 बृहस्पति देवता ४०.००

पं० सत्यकेतु विद्यालंकार कृत

आर्यसमाज का इतिहास (प्रथम भाग) १६५.००

आर्यसमाज का इतिहास (दूसरा भाग) १६५.००

आर्यसमाज का इतिहास (तृतीय भाग) १६५.००

आर्यसमाज का इतिहास (चतुर्थ भाग) १६५.००

आर्यसमाज का इतिहास (पाँचवाँ भाग) १६५.००

आर्यसमाज का इतिहास (छठा भाग) १६५.००

आर्यसमाज का इतिहास (सातवाँ भाग) १६५.००

प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग ६२.००

दक्षिणी-पूर्वी और दक्षिणी एशिया में भारतीय संस्कृति ८०.००

पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी एशिया का आधुनिक इतिहास ६६.००

मध्य एशिया व चीन में भारतीय संस्कृति २२.००

प्राचीन भारत ७७.००

भारतीय संस्कृति का विकास ५५.००

प्राचीन भारत का धार्मिक सामाजिक और आर्थिक जीवन ८०.००

प्राचीन भारत की शासन संस्थाएँ और राजनीतिक विचार ६२.००

एशिया का आधुनिक इतिहास १००.००

यूरोप का इतिहास १२०.००

समाजशास्त्र ६६.००

चाणक्य ४४.००

पतन और उत्थान ३५.००

मौर्य साम्राज्य का इतिहास ६०.००

राजनीति शास्त्र ८०.००

नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त १६.००

भारत का इतिहास ४२.००

विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ १७५.००

मध्यकालीन भारत ५८.००

धर्मजीत जिज्ञासु

जीवन गीत १२.००

मई-जून १९६३ वेदप्रकाश R.No. 627/57—Regd. No. DL-12026/93

विद्याभास्कर, वेदरत्न, न्याय-वैशेषिक सांख्य-योग्य तीर्थ,
वेदान्ताचार्य, शास्त्रशेवधि

आचार्य उदयवीर शास्त्री ग्रन्थावली

(पृष्ठ संख्या ७००० के लगभग, डिमाई आकार में)

ग्रन्थावली में सम्मिलित ग्यारह ग्रन्थ

१. न्याय दर्शन भाष्य	१५०-००
२. वैशेषिक दर्शन भाष्य	१२५-००
३. सांख्य दर्शन भाष्य	१००-००
४. योग दर्शन भाष्य	१००-००
५. वेदान्त दर्शन भाष्य (ब्रह्मसूत्र)	१८०-००
६. मीमांसा दर्शन का विद्योदय भाष्य	३५०-००
७. सांख्य दर्शन का इतिहास	२५०-००
८. सांख्य सिद्धान्त	२००-००
९. वेदान्त दर्शन का इतिहास	२००-००
१०. प्राचीन सांख्य सन्दर्भ	१००-००
११. वीर तरंगिणी (लेखों का संग्रह)	२५०-००

सम्पूर्ण ग्रन्थावली के ग्यारह खण्डों का मूल्य २०००.००

यह अमूल्य ग्रन्थावली बहुत बढ़िया कागज पर, सुन्दर छपाई, पक्की कपड़े की जिल्द में नयनाभिराम भी है।

प्रकाशक-मुद्रक अजयकुमार ने सम्पादित कर अजय प्रिंटर्स, दिल्ली-३२ में मुद्रित करा
वेदप्रकाश कार्यालय, ४४०८ नयी सड़क, दिल्ली से प्रसारित किया।